रामलीला मैदान से किसानों ने मोदी सरकार को लताड़ा, ललकारा

द्वितीय किसान आंदोलन का बिगुल

सत्यवीर सिंह

आम-तौर पर शांत रहने वाला, दिल्ली का रामलीला मैदान और आस-पास का इलाक़ा सोमवार 20 मार्च को भारी तादाद में हाथों में हरे-पीले और लाल झंडे थामे, नारे लगाते, ग्रामीणों-किसानों से चहक उठा। चेहरे पर विजयी भाव, मूछों को ताव साफ़ देखा जा सकता था, जो 13 महीने चले, शानदार किसान आंदोलन से उपजा था। उसके आलावा भी एक वजह है, जिसका ज़िक्र मैदान के अंदर गरज़ते नेताओं ने किया। 'कभी हमारा, रामलीला मैदान तक आना मना था, इस बार भी पहले यहां सभा के लिए 'ना' बोला गया, हम नहीं माने, तब सरकार को हाँ बोलना पड़ा', सुनते ही विशाल मैदान, तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठा। जब भी किसी को कहीं जाने से बलपूर्वक, छलपूर्वक रोका जाता है, तब मुख्य मुद्दा पीछे छूट जाता है, चुनौती को स्वीकारना प्रमुख विषय बन जाता है। सब जानते हैं, किसानों को दिल्ली आने से कैसे रोका गया था, उसे मूछों का प्रश्न बनाया गया था। खेती-किसानी से ज्यादा चुनौतीपूर्ण काम भला क्या होगा? घुप्प अँधेरी रात में, खेत में सिंचाई करने से जोखिमभरा काम और क्या होगा!! चुनौती मिले, तब ही किसानों का असली लड़ाकूपन निखर कर आता है। मूछों को ललकार कर, कोई फौज़ किसानों को नहीं हरा सकती।

'संयुक्त किसान मोर्चे' द्वारा आयोजित 'किसान महापंचायत' में, रामलीला मैदान के अंदर का नज़ारा वही था, जिससे देश अच्छी तरह वाकिफ़ है। बस एक अपवाद था, माहौल, दिल्ली सीमाओं के किसान मोर्चों जैसा व्यवस्थित नहीं, थोडा अराजक था। वज़ह समझी जा सकती है। महाद्वीप जैसे इस विशाल देश के कोने-कोने से हजारों की तादाद में लोग आए हों और उसी दिन वापस भी जाना हो, तो सबकुछ नियोजित नहीं हो सकता। "भाईयो, कहने-सुनने को तो बहुत है, वक्ता भी बहुत हैं, लेकिन हमें रामलीला मैदान ढाई बजे तक के लिए ही मिला है। कोई ये ना कहे, किसान नियम-क़ायदा नहीं मानते। सभा समाप्त, सबका हाथ जोड़कर धन्यवाद।' 2.29 बजे, सभा के अंतिम वक्ता की अंतिम लाइन सुनकर, कोई भी समझ सकता है कि भले ये लोग खुरदरे नज़र आते हों, सत्ता के ताबेदार इन्हें गंभीरता से ना लेते हों, अपने दिल में बहुत गंभीर मिशन लिए हुए हैं। आत्म-सम्मान से लबरेज़, ये किसान, इस देश का इतिहास और मुस्तक़बिल दोनों लिख रहे है। कुल 4:30 घंटे चली महापंचायत भी कई सन्देश, बिलकुल साफ-साफ़ देने में क़ामयाब रही।

पहला; 'संयुक्त किसान मोर्चे' को तोड़ने-फोड़ने के सभी सरकारी, गैर-सरकारी पैंतरे नाकाम हो चुके हैं। पाठकों को याद होगा कि कैसे केन्द्रीय कृषि मंत्रालय द्वारा प्रायोजित 'किसान', छींट की पगड़ियाँ बांधकर, 'सरकारी वार्ताओं' में आया करते थे। 'एसकेएम, किसानों से विश्वासघात कर रहा है, कृषि कानूनों को ठीक से समझा नहीं है', ऐसी 'बाईट' दिया करते थे। उसके अगले चरण में उसी प्रजाति के 'प्रायोजित किसान' नेता, 'एमएसपी' के लिए बनी सरकारी कमिटी में, कैमरों के सामने चर्चा किया करते थे!! वे सारे पाखंड रुई की तरह उड़ गए हैं। कई किसान नेता, किसानों के व्यवस्थाजन्य आक्रोश का फायदा, चुनाव जीतने में कर, मंत्री-संत्री बनने की इच्छा को नहीं दबा पाने के कारण भी अलग हुए। अलग मोर्चे बनाए लेकिन उसका कुल परिणाम निल बटा सन्नाटा ही रहा। उनके इशारों पर, सत्ता-दमन के

सामने अपनी छाती अड़ा देने वाले किसानों ने ही, उन्हें वोट नहीं दिया। उनके अलावा कम से कम दो संगठन, मोर्चे को उसके ऐतिहासिक आन्दोलन की शुरुआत में धोखा दे ही चुके थे। तोड़-फोड़ की इन सभी कार्यवाहियों से एसकेएम की एकता नहीं टूटी, तोड़ने वाले ही टूट गए।

दूसरा; मेहनतकश किसान और मज़दूर, दोनों ये सच्चाई दिल से स्वीकारने लगे हैं कि इकट्ठे नहीं आए तो लड़ाई अपनी अंजाम तक नहीं पहुंच पाएगी। ये बहुत महत्वपूर्ण स्वीकारोक्ति है। कुछ बातें तजुर्बे से ही सीखी जाती हैं, उन्हें स्टडी क्लास द्वारा या लिखा दिखाकर नहीं समझाया जा सकता। इस आन्दोलन की शुरुआत में, किसानों में भी, अपनी ताक़त के बारे में मुगालता था, कुछ हेकड़ी मौजूद थी; 'हम अकेले ही किला फतह करने के लिए काफी हैं'!! 600 से अधिक शहादतों और लाठी-गोली की सतत आशंकाओं के बीच, 13 महीनों तक मौसम की भट्टी में तपने के बाद पता चला, ये 'किला' इतना कमज़ोर भी नहीं है, जिसे कोई अकेले फ़तह कर ले। ये काम तो, समूचा मेहनतकश अवाम, अपनी फौलादी एकजुटता के बल पर ही कर पाएगा। किसान ये भी समझ गए कि लम्बे आन्दोलनों को चलाने के लिए, स्टेज से भाषण देने, टीवी बाईट देने के आलावा भी कई काम करने होते हैं, जिनका तजुर्बा किसान संगठनों से ज्यादा मज़दूर संगठनों को है। किसानों-मज़दूरों की ये एकजुटता बहुत दूर तलक जाने की संभावनाएं रखती है।

तीसरा; 20 मार्च की महापंचायत, एक बहुत सुखद सन्देश, ये देने में भी क़ामयाब रही कि किसान आंदोलन अब सही माने में अखिल भारतीय हो चुका ह। इसे अब, इसका संघी आलोचक भी, 'पंजाब-हरियाणा-प उ प्र' के किसानों का आंदोलन नहीं कह पाएगा। किसान इस मामले में बधाई के पात्र हैं, क्योंकि इस छवि को बनाने में, उन्होंने पिछले साल में बहुत मेहनत की है। आधे दिन की महापंचायत में भाग लेने के लिए भी, तामिलनाडू, केरल, तेलंगाना, आन्ध्र, असम बंगाल, बिहार आदि हर राज्य से हजारों किसान आए। और क्या सबूत चाहिए? तामिलनाडु से आए, एक किसान कार्यकर्ता ने बताया कि हम लोग ज्यादा तादाद में आए भी इसीलिए हैं, कि किसान आंदोलन को कोई उत्तर भारतीय आंदोलन ना कह पाए। कृपया याद रहे कि हमारे देश की पूंजीवादी- साम्राज्यवादी-फ़ासीवादी सत्ता, एक अत्यंत केंद्रीकृत सत्ता है। व्यवस्था को ज़रा भी आंच महसूस हो, तो राज्यों के जो भी अधिकार हैं, वे भी केंद्र के हाथों में चले जाते है। शुरुआत भले कहीं से भी हो, कोई भी गंभीर इलाकाई तहरीक आज क़ामयाब नहीं हो सकती।

चौथा; एक और बहुत दिलचस्प संदेश इस महापंचायत के भाषणों और कार्यक्रमों से स्वयं छलककर बाहर आया। किसानों ने अपनी मांगों का खुलासा, 19 मार्च को प्रेस क्लब पर हुई प्रेस वार्ता में कर दिया था और ज्ञापन द्वारा भी किया। सरकार तो, पहले दिन से ही जानती थी कि सारी कृषि उपज को न्यूनतम ख़रीदी मूल्य पर ख़रीदना नहीं है। कोई भी पूंजीवादी सरकार ऐसा नहीं कर सकती।

सरकार की असल मंशा है कि भयंकर तपे हुए किसानों को लारे-लप्पे में उलझाकर रखो, वर्ना ये चुनाव का गणित बिगाड़ देंगे। अब, लेकिन, किसान भी ये जान चुके हैं, कि एमएसपी ख़रीद गारंटी कानून बनवाने और उसे लागू करवाने का काम असंभव जैसा कठिन है। राजस्थान में जन्मे और बंटवारे में पाकिस्तान में मक़बूल हुए शायर, मुश्ताक़ अहमद यूसुफ़ी कहा करते थे कि 'यदि बोलने वाला और सुनने वाला, दोनों ये बात जानते हों कि ये बात झूठ है, तो ये गुनाह नहीं है'!! किसान इस सबक़ को किसी और तरीक़े से ना समझते। उन्हें ये भी जान लेना होगा, अगर वे, अभी तक नहीं जाने हैं कि 'सारी उपज की सारी ख़रीद, निश्चित रेट पर सरकार करे, जिसे एमएसपी गारंटी का क़ानून कहा जाता है, इस असंभव दिखने वाली मांग को मनवाए और लागू कराए बगैर, किसी और मांग के मान लिए जाने का कोई अर्थ नहीं। खेती के कारपोरेटीकरण को सिर्फ ये क़ानून ही रोक सकता है।

किसानों को, धीरे-धीरे, ये भी समझ आ जाने वाला है, कि ऐसा सिर्फ़ वह व्यवस्था ही कर सकती है, जो, मुनाफ़े की कभी शांत ना होने वाली अजगरी भूख से संचालित ना होकर, सारे समाज की ज़रूरतें पूरी करने के उद्देश्य से संचालित होती है। इस व्यवस्था को समाजवाद कहते हैं, जिसकी प्रस्थापना पूंजीवाद को उखाड़ फेंककर ही संभव है। किसान, उस ओर सोचने लगे हैं, इसलिए मांग पत्र देने के साथ ही, आन्दोलन के विस्तृत कार्यक्रम की घोषणा भी कर दी गई। हर राज्य, अपने किसान सम्मलेन आयोजित करे। ये फैसला भी किसान नेतृत्व की परिपक्वता दर्शाता है, क्योंकि राज्य सम्मलेन करने के लिए, जिलावार सम्मलेन भी करने होंगे। किसी भी आन्दोलन को लंबा चलाने और उसे अंजाम तक पहुंचाने के लिए, उसमें ज़मीन स्तर पर लोगों का जुड़ना ज़रूरी ह। राज्य सम्मलेन करने के बाद, 30 अप्रैल को, फिर संयुक्त किसान मोर्चा आगे की रणनीति तय करेगा, ये अहम घोषणा भी मंच से की गई।

पांचवां; मोदी सरकार, अडानी-अंबानी की सरकार है; ये हक़ीक़त तो, 13 महीने चले ऐतिहासिक किसान आन्दोलन की थीम ही थी। हिंडनबर्ग रिपोर्ट आने के बाद, जिस तरह अडानी का साम्राज्य भरभराकर गिरा, उससे ये साबित हो गया कि आज के 'विकास' का मतलब शुद्ध ठगी, हेराफेरी और वित्तीय फ्रॉड करने और सरकारी तंत्र की मिलीभगत से, उस फ्रॉड से बाहर निकल जाने की क्षमता का ही नाम है। 'बेनामी गटर पूंजी' दैत्याकार रूप ले चुकी है। उसमें कौन कौन भागीदार हैं, अंदाज़ लगाना मुश्किल है। अडानी बंधुओं के, ठगी करते रंगे हाथों पकड़े जाने के बाद भी, उन्हें बचाने के लिए, 'देशभक्त' सरकार किस हद तक जा सकती है, देश के सामने ये खुलासा पहली बार ही हुआ है। ईडी, सीबीआई को शासक दल के अंग बनाकर, इस अभूतपूर्व फ्रॉड के खिलाफ़ मुंह खोलने वाले, हर व्यक्ति के पीछे दौड़ाया जा रहा है। नंगई के इस स्तर पर देश कभी नहीं पहुंचा था। ईडी-सीबीआई आतंक किसानों के सामने बे-असर है।

यह तथ्य, इस आन्दोलन के किरदार को और भी ऊँचा ले जाता है। सरकार ये बात जानती है, इसलिए किसानों के सामने अब नरम नज़र आना चाहती है। किसानों को ये बात नोट करते हुए, अपने आंदोलन को ऊँचे स्तर तक ले जाने की सभी संभावनाओं का दोहन करना चाहिए।

किसानों की मांगें

सुबह 10 बजे, महापंचायत शुरू होने से पहले ही, केन्द्रीय कृषि मंत्री के बुलावे पर, किसानों के 15 संगठनों के इन प्रतिनिधियों ने, मांगों का ज्ञापन दिया, सर्व श्री आर वैंकैय्या, डॉ सुनीलम, प्रेम सिंह गहलावत, वी वेंकटरमैय्या, सुरेश कोठ, युद्धवीर सिंह, हन्नान मौला, बूटा सिंह बुर्जगिल, जोगिन्दर सिंह उगराहन, सत्यवान, अविक साहा, दर्शन पाल, मंजीत राय, हरिंदर लाखोवाल, सतनाम सिंह बहरू। किसान नेताओं ने अफसोस ज़ाहिर किया कि दिसंबर 2021 में किसान आन्दोलन को वापस लेने की प्रार्थना के साथ, सरकार ने उनकी जिन मांगों को पूरा करने का लिखित आश्वासन दिया था, उनमें एक भी मांग पूरी नहीं हुई। सरकार निम्नलिखित मांगों को यथाशीघ्र पूरा करे, वरना पिछली बार से भी ज़बरदस्त आंदोलन का सामना करने के लिए तैयार रहे।

1) स्वामीनाथन आयोग की सिफारिशों का सम्मान करते हुए, सी-2 + 50 प्रतिशत के आधार पर, समूची कृषि उपज का न्यूनतम मूल्य घोषित हो और इस दर पर सारी खरीदी सुनिश्चित करने के लिए 'एमएसपी ख़रीद गारंटी क़ानून' पास हो। इस बाबत गठित 'सरकारी कमिटी' को बरखास्त कर, संयुक्त किसान मोर्चे के किसानों को उचित स्थान देते हुए, नई कमिटी का गठन हो।

2) खेती-किसानी में लागत भी ना वसूल होने के कारण, 80 फीसदी किसान कर्ज़ में डूबे हुए हैं, आत्महत्या करने पर मज़बूर है। किसानों के सभी कर्जों को माफ़ किया जाएं।

3) सरकार ने 'बिजली संशोधन विधेयक, 2022' को संसद की संयुक्त संसदीय समिति को भेजा हुआ है। सरकार वहां से तत्काल वापस ले और उसे रद्द कर। ग़रीब किसानों व अन्य ग्रामीणों को 300 यूनिट तक बिजली मुफ़्त दी जाए।

4) लखीमपुर खीरी किसान हत्याकांड के मास्टरमाइंड, अजय मिश्र टेनी को मंत्रिमंडल से तत्काल बरखास्त कर गिरफ्तार किया जाए। शहीद अथवा घायल हुए किसानों के परिवारों को उचित मुआवजा देने के वादे को सरकार पूरा कर।

5) बीमा कंपनियों को फ़ायदा पहुँचाने वाली, फसल बीमा योजना रद्द हो और उसकी जगह फसलों के नुकसान का सही मूल्यांकन कर, उचित मुआवज़ा तत्काल देने वाली, फसल बीमा योजना लागू हो, जिसमें आवारा पशुओं द्वारा हो रहे नुकसान को भी शामिल किया जाए। मौजूदा ओला वृष्टि और बे-मौसम बरसात से हुए नुकसान की भी भरपाई की जाए।

6) हर किसान को 60 वर्ष की उम्र के बाद, कम से कम 5,000/ मासिक पेशन मिले।

7) आन्दोलन के दौरान किसानों पर लादे गए सभी मुक़दमे रद्द हों। संयुक्त किसान आन्दोलन जितना व्यापक होगा, उतना ही मज़बूत होगा। इसे किसी भी जाति, धर्म, संप्रदाय, इलाक़े से, प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से जोड़ना, इसे कमज़ोर करना है। साथ ही, कृषि मंत्री का

ये बयान, कि 'बिजली संशोधन विधेयक 2022' के दायरे से हमने किसानों को बाहर कर दिया है, किसानों को इसका विरोध नहीं करना चाहिए, घोर चालाकीपूर्ण विघटनकारी पैंतरा है। किसानों को मालूम होना चाहिए कि उनके आन्दोलन के पहले चरण की कामयाबी में, समाज के अन्य तबकों का भी हाथ ह। जब सारे दरबारी मीडिया ने उनके ख़िलाफ़ ज़हर उगलना शुरू किया हुआ था, उस वक़्त जाने कितने लोगों ने अपने मोबाइल की मदद से उस आन्दोलन को घर-घर पहुँचाया। किसानों ने, उस ट्रैप में आने से मना कर, परिपक्वता का परिचय दिया है।

मांग पत्र पर सरकारी कार्यान्वयन का इंतज़ार करने में वक़्त गंवाए बगैर, आने वाले आन्दोलनों की तैयारी का फैसला भी दूरदर्शितापूर्ण है। समाज के किसी भी एक हिस्से की आर्थिक मांगों को पूरा कराने वाले आन्दोलनों का युग बीत गया। ये, आर्थिक नहीं बल्कि राजनीतिक आंदोलनों का काल खंड ह। सत्ता का डंडा किसके हाथ में रहेगा और किसके सर पर पड़ेगा, राजनीति से ही तय होता है। राजनीतिक संघर्ष, समाज के सारे शोषित-पीड़ित वर्ग को गोलबंद करने पर ही क़ामयाब होते हैं। इतिहास ने किसानों को ऐसे आन्दोलनों का आगाज़ करने का मौक़ा दिया है, मज़दूर और किसान मिलकर इसे मंज़िल तक पहुँचाएँगे।